कुशीनगर जनपद में सेवाकेन्द्रों का उद्भव एवं विकास

डॉ0 संजीत कुमार सिंह

असिस्टेन्ट प्रोफेसर भूगोल विभाग दिग्विजयनाथ पी.जी.कालेज,गोरखपुर

Author Email: sanjeetk80@gmail.com

किसी भी क्षेत्र में स्थित ऐसा केन्द्र जो उस क्षेत्र विशेष में निवास करने वाली जनसंख्या को वस्तुएं एवं सेवाएं प्रदान करता है, सेवा केन्द्र कहलाता है। अपने सम्पूरक क्षेत्र की सेवावृत्ति ही सेवाकेन्द्रों का प्रमुख आधार होता है। सेवा केन्द्र चूँकि अपने प्रदेश के केन्द्र होते है और प्रायः लगभग केन्द्रस्थल भी होते है। इसलिए इनको केन्द्रस्थल भी कहते है। सेवा केन्द्र के लिए **मार्क जेफरसन** ने 1931 में **Central Place**[1] शब्द का प्रयोग किया है जबकि **क्रिस्टालर**[2] ने इनके समानार्थक Zentralort शब्द का प्रयोग किया। सेवा केन्द्र सन्दर्भ में वाल्टर क्रिस्टालर का सिद्धान्त महत्वपूर्ण है।

सेवा केन्द्र मात्र नगरीय केन्द्र ही नही होते बल्कि ऐसे ग्रामीण अधिवासी भी जो अपने चारों तरफ के क्षेत्रों को सेवाऐं प्रदान करते है, सेवा केन्द्र हो सकते है। नगर, कस्बे तथा बाजार ये सभी अपने आन्तरिक जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त कुछ कार्य अपने चारो ओर स्थित समीपवर्ती क्षेत्रों के लिए भी करते हैं। ऐसे ही आर्थिक, सामाजिक कार्य जिन्हें कोई स्थान या केन्द्र न केवल अपने लिए बल्कि मुख्य रूप से चारों ओर के समीपवर्ती घेरे हुए क्षेत्रों के लिए करते हैं, केन्द्रीय कार्य कहते हैं तथा ऐसे केन्द्रों को जिनमें अथवा जिनके द्वारा से कार्य होते हैं सेवा–केन्द्र कहते हैं। आसपास के सभी क्षेत्र इन केन्द्रों पर अपनी बहुत सी सामाजिक तथा आर्थिक आवश्यकताओं के लिए निर्भर रहते हैं। इस प्रकार सेवा–केन्द्रों को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है–''ऐसे स्थायी मानव अधिवास या निर्माण जहां पर सामाजिक, आर्थिक तरह की वस्तुओं, सेवाओं तथा आवश्यकताओं का विनिमय आधारभूत रूप से और प्राथमिक रूप से अस्थानीय या अकेन्द्रीय जनसंख्या के लिए किया जाता है और इसलिए अपरोक्ष रूप से समीपवर्ती चारों ओर को घेरते हुए जिनका अपने प्रदेश के रूप में अधिकार एवं नियंत्रण रहता हैं, सेवा–केन्द्र कहलाता है।[3]

सेवा–केन्द्र संकल्पना के दो मूलाधार हैं–प्रथम कुछ आर्थिक नियंत्रण कारक होते हैं, जो विपणन केन्द्रों के स्वरूप एवं क्रियाकलापों को प्रभावित करते हैं और दूसरा आधार संरचनात्मक स्वरूप से सम्बन्धित हैं। यह स्वरूप मानव अधिवासों की आदर्शतम स्थिति में ही परिलक्षित होता है, जो केन्द्रीय क्रियाकलापों को सम्पन्न करता है। आर्थिक नियंत्रक कारकों में प्रभावसीमा तथा वस्तु परास निहित हैं। क्रिस्टलर के अनुसार किसी सेवा–केन्द्र को कार्यरत रहने के लिए न्यूनतम मांगे होनी आवश्यक हैं। वस्तु परास के अन्तर्गत वह दूरी आती हैं, जहॉ तक वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति लाभदायक ढंग से की जा सकती है। इस तरह सेवा–केन्द्र के प्रभाव प्रदेश का निर्धारण होता है। सामान्य वस्तुओं की आपूर्ति करने वाले सेवा–केन्द्र संख्या में कम होते हैं।

परिकल्पना

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित होगा–

1. सेवा–केन्द्र एक मानवीय रचना हैं, परन्तु इसके उद्भव एवं विकास में प्राकृतिक एवं मानवीय कारक एवं प्रक्रियाऐं कार्य करती हैं।
2. किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सेवा–केन्द्र विकास ध्रुव का कार्य करते हैं।
3. सेवा–केन्द्रों से विकास परिवहन माध्यमों द्वारा संचालित होता है अतः सेवा–केन्द्रों पर अतिरिक्त विकासात्मक इकाईयों की स्थापना से विकास प्रोत्साहित होगा।

अध्ययन क्षेत्र का सामान्य परिचय

कुशीनगर जनपद उत्तर प्रदेश राज्य के उत्तरी–पूर्वी छोर पर अवस्थित हैं। जहां दक्षिण में इसकी सीमा देवरिया जनपद से मिलती है वहीं दक्षिणी–पश्चिमी सीमा गोरखपुर जनपद से मिलती है। उत्तर–पश्चिमी सीमा पर महराजगंज तथा पूर्व में बिहार प्रान्त इसकी सीमा का निर्धारण करते है। इसका अक्षांशीय विस्तार 26^0 33′ उत्तर से 27^0 18′ उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार 83^0 31′ पूर्व से 84^0 23′ पूर्वी देशान्तर के मध्य हैं।[4] इसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 2910 वर्ग किमी0 है। इसकी आकृति त्रिभुजाकार हैं। यह जनपद पहले देवरिया जनपद का

अंग था, लेकिन प्रशासनिक एवं कुशीनगर के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व को देखते हुए 13 मई 1994 को देवरिया जनपद के उत्तरी भाग को अलग कर, पड़रौना नाम से एक नया जनपद बनाया गया। बाद में कुशीनगर के महत्व को देखते हुए 19 जून को पड़रौना जनपद का नाम कुशीनगर जनपद रखा गया।[5] अध्ययन क्षेत्र एक समतल मैदान है, जो सरयूपार मैदान का ही एक भाग है। जनपद का सामान्य ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्वी की ओर है। यहा केवल अवसादी शैलों का ही विस्तार हैं। समुद्र तल से जनपद की ऊँचाई 80–100 मीटर हैं। 80 मीटर की समोच्य रेखा राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 28 के समानान्तर से गुजरती हैं। अध्ययन क्षेत्र में बड़ी गण्डक नदी, छोटी गण्डक नदी, बांसी नदी, झरही, मझना एवं खनुआ आदि नदी एवं नाले पाये जाते हैं।

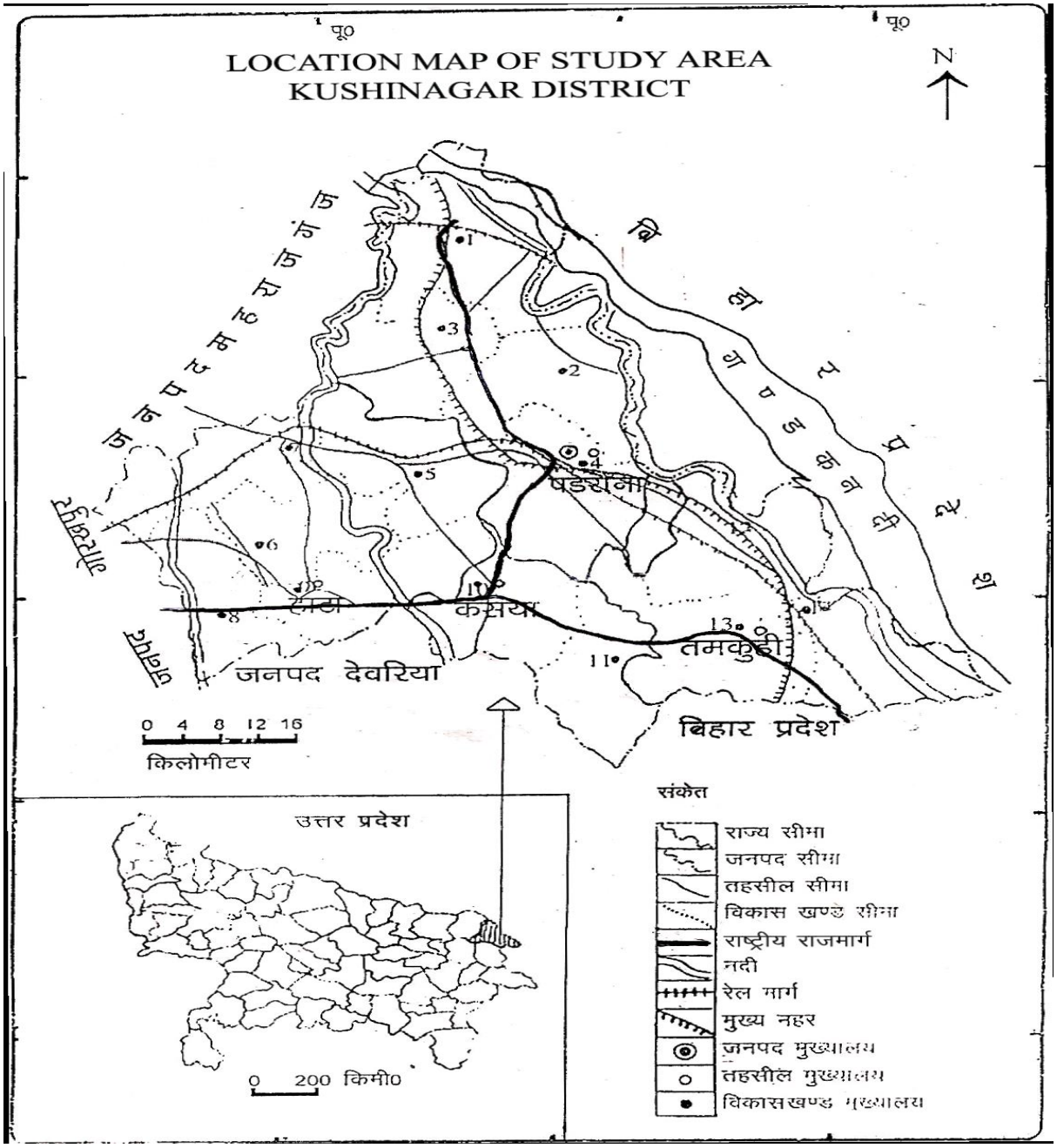

चित्र–1

जनगणना 2001 के अनुसार कुशीनगर जनपद की सम्पूर्ण जनसंख्या 28.92 लाख हैं[6] जिसमें 95.42 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण है। यहां का सामान्य जनसंख्या घनत्व 996 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी0 हैं, जबकि लिंगानुपात 1000:963 हैं। अध्ययन क्षेत्र की साक्षरता 46.94 प्रतिशत है। जनपद में चार तहसील, 14 विकासखण्ड, 141 न्याय पंचायत 1,571 आवाद ग्राम, 1 नगरपालिका तथा 6 नगर पंचायतें हैं।

सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास को प्रभावित करने वाले कारक

किसी भी क्षेत्र में सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में वहाँ की ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान होता हैं। क्षेत्र विशेष की भौतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में सहायता प्रदान करते है। ये सेवा–केन्द्र क्षेत्र विशेष में अचानक स्थापित (उत्पन्न) नहीं होते हैं। इनका विकास मानव अधिवासों के प्रभाव में होता हैं क्योंकि ये मानव अधिवासों के अभिन्न अंग होते हैं। उपर्युक्त कारकों के बदलने के कारण अधिवासों के महत्व एवं आकार में वृद्धि होती हैं, या वे उनमें ह्रास होता हैं।[7] प्रत्येक पूर्ण विकसित केन्द्र (या बड़ा नगर) सर्वप्रथम एक छोटी बस्ती (या स्थान) के रूप में स्थापित होता हैं, जिसका विकास भिन्न–भिन्न भौतिक एवं मानवीय कारकों पर आश्रित रहता हैं। एक बार किसी स्थान पर सेवा–केन्द्रों के जन्म ले लेने पर तथा उसके कार्य करने पर अनेक ऐतिहासिक राजनैतिक तत्व उसकी विकास की अवस्थाओं को निर्धारित करने के लिए प्रभावित करते है।[8] इस प्रकार सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास को प्रभावित करने वाले कारकों को भौतिक एवं मानवीय दो भागों में बाटा जा सकता हैः–

(अ) भौतिक कारक

सेवा–केन्द्र तो एक मानवीय रचना हैं लेकिन इसके प्रारम्भिक आधार को भौतिक कारक ही प्रभावित करते हैं। भौतिक कारकों के अन्तर्गत धरातल की बनावट, जल की उपलब्धता, परिवहन मार्ग आदि आते हैं। सेवा–केन्द्रों के आकार को भौतिक कारक ही नियंत्रित करते हैं, जहाँ पर जितने विकसित एवं सुदृढ़ भौतिक कारक होंगे वहाँ उतने ही विकसित एवं बड़े सेवा–केन्द्रों का विकास होगा। सेवा–केन्द्रों के उद्भव में जल की उपलब्धता प्रमुख होती है। जल मार्गों द्वारा स्थानीय यातायात की सुविधा मिलती हैं। प्राचीन काल में जब आधुनिक विकसित सेवा–केन्द्रों की स्थापना हुई तो उनको एक छोटी बस्ती या निर्माण के रूप में बहुसुरक्षित प्राकृतिक आधार धरातलों पर बसाया गया और आज भी अधिकांश केन्द्र भिन्न–भिन्न नदियों के किनारे ही स्थित पाये जाते हैं।

(ब) मानवीय कारक

धरातल का स्वरुप, जल की उपलब्धता एवं विकास आदि भौतिक कारकों द्वारा प्राप्त सुविधाओं के मूल आधार पर मानवीय कारक कार्य करना प्रारम्भ करते हैं। मानवीय कारक सेवा–केन्द्रों के उद्भव, विकास तथा वितरण में प्राकृतिक कारकों की भाँति कम प्रभावी नहीं हैं। प्रशासकीय कारक, यातायात मार्ग तथा आर्थिक विकास एवं अवस्था आदि प्रमुख मानवीय कारक हैं जो सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास पर प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार भौतिक एवं मानवीय कारक सम्मिलित रूप से कार्य करके सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में योगदान देते हैं। प्रशासकीय मुख्यालय या केन्द्र, सुरक्षा केन्द्र या स्थल, किले, क्षेत्रीय राजधानियाँ, महल, औद्योगिक आवास स्थल आदि कृत्रिम शक्तियों के परिणाम हैं। सेवा–केन्द्रों की सर्वाधिक आवश्यकता विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होती हैं। ऐसा स्थान अपेक्षाकृत क्षेत्र के केन्द्र में स्थित होता हैं और उस क्षेत्र की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हैं। इन केन्द्रों का जन्म सामान्यतया मेलों के स्थान, साप्ताहिक बाजार, मन्दिर या धर्मशाला, मार्ग केन्द्र आदि के रूप में होता हैं। इन स्थानों की स्थिति मध्यवर्ती होनी चाहिए तथा परिवहन मार्गों द्वारा सेवा–केन्द्रों से सम्बद्धता भी होनी चाहिए जिससे सम्पूर्ण क्षेत्र को सेवाएं प्राप्त हो सकें। सेवा–केन्द्रों के विकास के निम्न प्रेरक तत्व हैः–

(1) विनिमय प्रक्रिया– वस्तुओं एवं आवश्यकताओं का विनियम एक प्राथमिक आवश्यकता है जिसकी पूर्ति के लिए सेवा–केन्द्रों का जन्म होता है। इसके अतिरिक्त कोई नई बस्ती भी सेवा–केन्द्र के रूप में विकसित हो सकती है। कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं हैं जहाँ पर जनसंख्या वैयक्तिक रूप से अपनी प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आत्मनिर्भर और स्वतंत्रता हों। उसके लिए एक बहुगम्य केन्द्र की आवश्यकता होगी, इस प्रकार एक स्थानीय बाजार की उत्पत्ति हो सकती हैं। जिस स्थान पर पहले से कोई बड़ा सेवा–केन्द्र कार्य कर रहा हों वहाँ नये सेवा–केन्द्रों का जन्म भी हो सकता हैं, जो वर्तमान सेवा–केन्द्र की सेवा पूर्ति सीमा से बाहर हो एवं उसकी स्थिति मध्यवर्ती हों।

(2) क्षेत्रीय आवश्यकता– जैसे–जैसे क्षेत्र की आर्थिक आवश्यकताओं में परिवर्तन होता जाता हैं उसी के अनुरूप सेवा–केन्द्रों में भी परिवर्तन होने लगता हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से अधिक सम्पन्न क्षेत्रों में केन्द्रीय वस्तुओं तथा सेवाओं की मांग अधिक एवं उच्च किस्म की होती है। इसलिए ये क्षेत्रीय केन्द्र अधिक सम्पन्न होते हैं। धीरे–धीरे केन्द्रीय वस्तुओं की मांग बढ़ने लगती हैं और पुराने केन्द्रों की सेवा क्षमता बढ़ने लगती हैं, एवं उसकी समीप एक नये केन्द्र की स्थापना का विकास होने लगता है।

(3) प्रशासकीय क्रियाएं– प्रशासकीय कारक जो कृत्रिम होते हैं का महत्व कम नहीं होता हैं। ये न केवल कुछ केन्द्रों की उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी होते हैं, अपितु ये केन्द्र स्थलों के भावी विकास में भी सहायक होते है। पहले की प्रशासकीय बस्तियां इस समय बड़े केन्द्रों के रूप में विकसित हो गये हैं। कुछ अन्य केन्द्र राजधानी या मुख्यालय के कारण ही संवृद्ध हुए हैं।

(4) परिवहन सम्बद्धता– सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में परिवहन मार्ग एक महत्वपूर्ण कारक हैं। परिवहन मार्गों के केन्द्रों पर ही प्रायः बाजार केन्द्रों का जन्म होता हैं। सड़कों के मिलन–बिन्दुओं पर सेवा–केन्द्रों का लगातार विकास होता हैं। किसी पूर्व स्थित केन्द्र का जुड़ाव जब परिवहन तंत्र से हो जाता हैं तो उसका सेवा–क्षेत्र बढ़ जाता है। परिवहन मार्गों एवं साधनों के अभाव में सेवा–केन्द्र एवं उसके प्रभाव को सही ढ़ंग से एक दूसरे से सम्बद्ध नहीं किया जा सकता है।

(5) कार्यात्मक आधार– सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में उस केन्द्र पर विकसित कार्यात्मक आधार का महत्वपूर्ण योगदान होता हैं। प्राचीनकाल में बहुत से सेवा–केन्द्र इसलिए समाप्त हो गये थे, क्योंकि उनका कार्यात्मक आधार कम या समाप्त हो गये थे। सेवा–केन्द्रों का लगातार विकास होने के लिए अपने समीपवर्ती क्षेत्रों को लगातार सेवाएं देना आवश्यक होता हैं। प्राचीन काल में अधिकांश केन्द्रों का जन्म प्रशासकीय प्रभाव क्षेत्रों, धार्मिक स्थानों, क्षेत्रीय केन्द्रों तथा राजनैतिक राजधानियों के रूप में हुआ हैं तथा केन्द्रों को सामाजिक–आर्थिक आधार बाद में प्रदान हुआ। प्राचीन केन्द्रों के निर्धारण में धरातल और अवस्थिति की भौतिक सीमाओं का प्रभाव अधिक रहा। आधुनिक एवं मध्यकालीन नगरों में कुछ का जन्म एक विशेष प्रकार की बस्ती निर्माण से हुआ तथा वहाँ पर केन्द्रीय कार्यों का विकास बाद में हुआ।

ऐतिहासिक काल क्रम में कुशीनगर जनपद में सेवा–केन्द्रों का उद्भव एवं विकास

सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में ऐतिहासिक घटनाओं का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान रहता है। अतः इसका विश्लेषण करना अनिवार्य हो जाता हैं। जनपद के सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास को हम निम्न रूपों में देख सकते है–

(क) प्राचीन काल

ऐतिहासिक विवरणों से यह स्पष्ट होता हैं कि कुशावती (कुशीनगर) राम के पुत्र कुश द्वारा स्थापित एवं उनकी राजधानी थी। इसका नाम कुश के नाम पर ही कुशावती पड़ा जो आगे चलकर कुशीनारा, कुशीग्राम, कुशीनगरी और अन्ततः कुशीनगर हो गया।[9] अध्ययन क्षेत्र बौद्ध एवं जैन धर्मों का प्रमुख स्थल रहा है। 'कुशीनगर' बौद्ध धर्म एवं 'पावा' जैन धर्म का प्रमुख केन्द्र था। ये दोनों स्थल मल्ल गणराज्य के प्रमुख प्रशासनिक केन्द्र भी थे। इसके अतिरिक्त अनुरूधवा, कसया, पडरौना से खुदाई में बौद्ध कालीन संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इसके अतिरिक्त कुबेरस्थान, तुर्कपट्टी एवं बांसी भी प्राचीनकाल के सेवा–केन्द्र माने जाते हैं (चित्र 2)।

(ख) मध्य काल

12 वी शताब्दी से 17 वी शताब्दी के मध्य तक जनपद में सेवा–केन्द्रों की दशा संतोषजनक नहीं थी। मध्य युग में मझौली के विसेन वंशी राजा ने अपने एक कुर्मी सेवक को 14 कोस का राज्य दान में दिया। यही आगे चलकर सैधवार राज्य (पडरौना) के रूप में विकसित हुआ। आगे चलकर 18 वीं शताब्दी में यह राज्य दो भागों में बट गया तथा पडरौना तथा लक्ष्मीपुर इसकी राजधानियाँ बनी। मध्यकाल में सिधुआ जोवना परगना (वर्तमान में देवरिया जनपद में) के अधीन भूमिहार राजवंश की राजधानी तमकुहीराज में स्थापित की गयी जिसका अधिकांश राज्य विस्तार बिहार प्रान्त में था। सन् 1764 में श्रीनेत राजपूतों ने इस क्षेत्रा से बंजारों के आंतक को समाप्त कर दिया तथा रूद्रपुर (देवरिया जनपद) को अपनी राजधानी बनाया। जनपद के उत्तरी भाग के तराई क्षेत्राों पर भूमिहार राजवंश ने अधिकार कर खड्डा नामक जातीय अधिवास की स्थापना की। सत्राहवीं सदी तक इस क्षेत्रा में कोई पक्की सड़क नहीं थी सभी स्थल मार्ग कच्चे एवं सेतुविहीन थे। सदी के अन्तिम वर्षों में शुजाउद्दौला ने कर वसूली के लिए मेजर हैनी नामक अंग्रेजी फौजदार की नियुक्ति की तथा अयोध्या से गोरखपुर–पडरौना तक सड़क का निर्माण कराया। इस काल में पडरौना, कुशीनगर, लक्ष्मीपुर, पावानगर, तमकुहीराज आदि व्यापारिक केन्द्र थे। इसके अतिरिक्त खड्डा, सलेमगढ़, कप्तानगंज आदि आधिवास के रूप में स्थापित हुए।

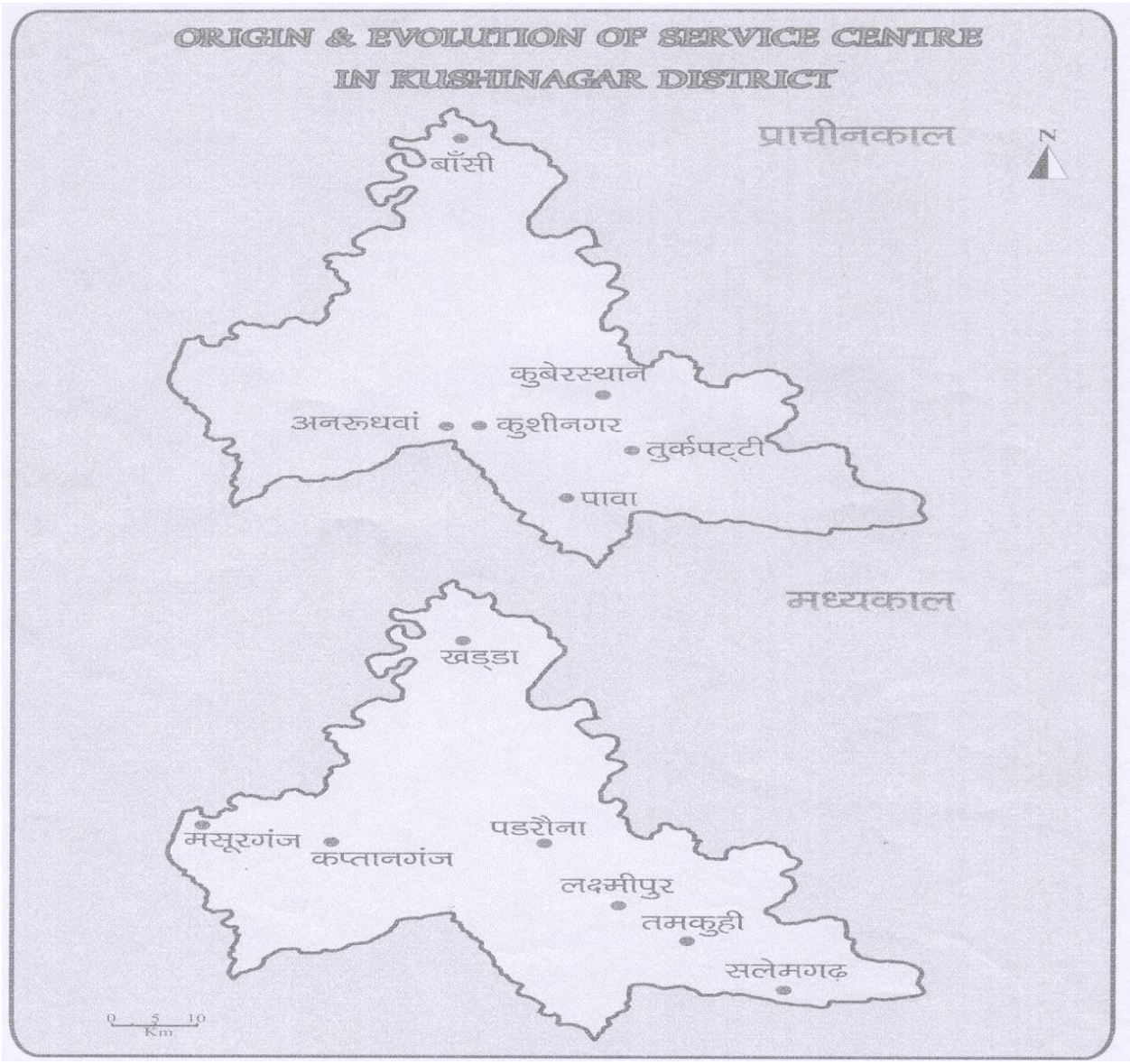

चित्र–2

(ग) आधुनिक काल

औरगंजेब की मृत्यु 1707 के बाद इस क्षेत्रा पर अवध के नवाबों का अधिकार हो गया। अवध के नवाब एवं क्षेत्रा के स्थानीय राजपूत राजाओं के मध्य संघर्ष लगातार बना रहा। 1739 में मंसूर खाँ सफदर जंग को इस क्षेत्रा का सूबेदार बनाया गया, इसने मसूरगंज की स्थापना की। जो एक प्रशासनिक केन्द्र बिन्दु था। मझौली के राजा ने क्षेत्रा में दो प्रशासनिक केन्द्र पडरौना इस्टेट एवं तमकुही इस्टेट को Buffer Estate के रूप में बढ़ावा दिया। अंग्रेजी शासनकाल में इस जनपद पर ब्रिटिश सेना का अधिकार हो गया जिसने अपनी सुविधा के अनुसार क्षेत्र में थाना, नगरपालिका, तहसील मुख्यालय, शिक्षण संस्थान, और अस्पतालों की स्थापना किये। अंग्रेजों ने कैप्टनगंज (कप्तानगंज) में पुलिस थाना की स्थापना की। सन् 1871 ई0 में इन्होंने पडरौना नगरपालिका का गठन किया। स्वतंत्राता आन्दोलन में इस जनपद के कसया, हाटा, पडरौना, रामकोला, तमकुही, कप्तानगंज आदि जगहों पर आन्दोलन को गति प्रदान की गयी। महात्मा गाँधी, कस्तुरबा गांधी, जे0बी0 कृपालानी, रफी अहमद किदवई, जवाहर लाल नेहरू, और पुरूषोत्तम दास टण्डन ने इस क्षेत्रा का दौरा किया एवं सभाऐं की। 1946 में देवरिया के रूप में गोरखपुर से अलग कर एक नया जनपद बनाया गया। पुनः देवरिया का विभाजन कर 1994 में पडरौना के नाम से एक नया जनपद बनाया गया तथा कुशीनगर के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व को देखते हुए 1997 में इसका नाम पडरौना से बदल कर कुशीनगर

कर दिया गया जिसमें पडरौना, हाटा, कसया एवं तमकुही तहसीलें मुख्य प्रशासनिक केन्द्र के रूप में स्थापित हुई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार का ध्यान पिछड़े क्षेत्राों की तरफ गया तो अध्ययन क्षेत्र में स्थित कई ग्राम जहाँ साप्ताहिक बाजार एवं मेले लगते थे, रेलवे लाइन एवं सड़कों के मध्य थे, सेवा–केन्दों का विकास हुआ। सेवा–केन्द्रों के विकास में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका प्रशासनिक केन्द्रों की स्थापना, सड़कों का विकास एवं उद्योगों की स्थापना महत्वपूर्ण होती है। स्वतंत्रता के बाद कई सेवा–केन्द्रों का विकास इसी कारणों के परिणाम स्वरूप हुआ।

1994 में जनपद निर्माण के समय चार तहसीलें (पडरौना, कसया, तमकुही एवं हाटा)

एवं चौदह विकासखण्ड थे जो निम्नवत थे–

1. कप्तानगंज 8. तमकुही
2. खड्डा 9. सेवरही
3. हाटा 10. नेबुआ नौरंगिया
4. कसया 11. बिशुनपुरा
5. मोतीचक 12. फाजिलनगर
6. रामकोला 13. दुदही
7. पडरौना 14. सुकरौली

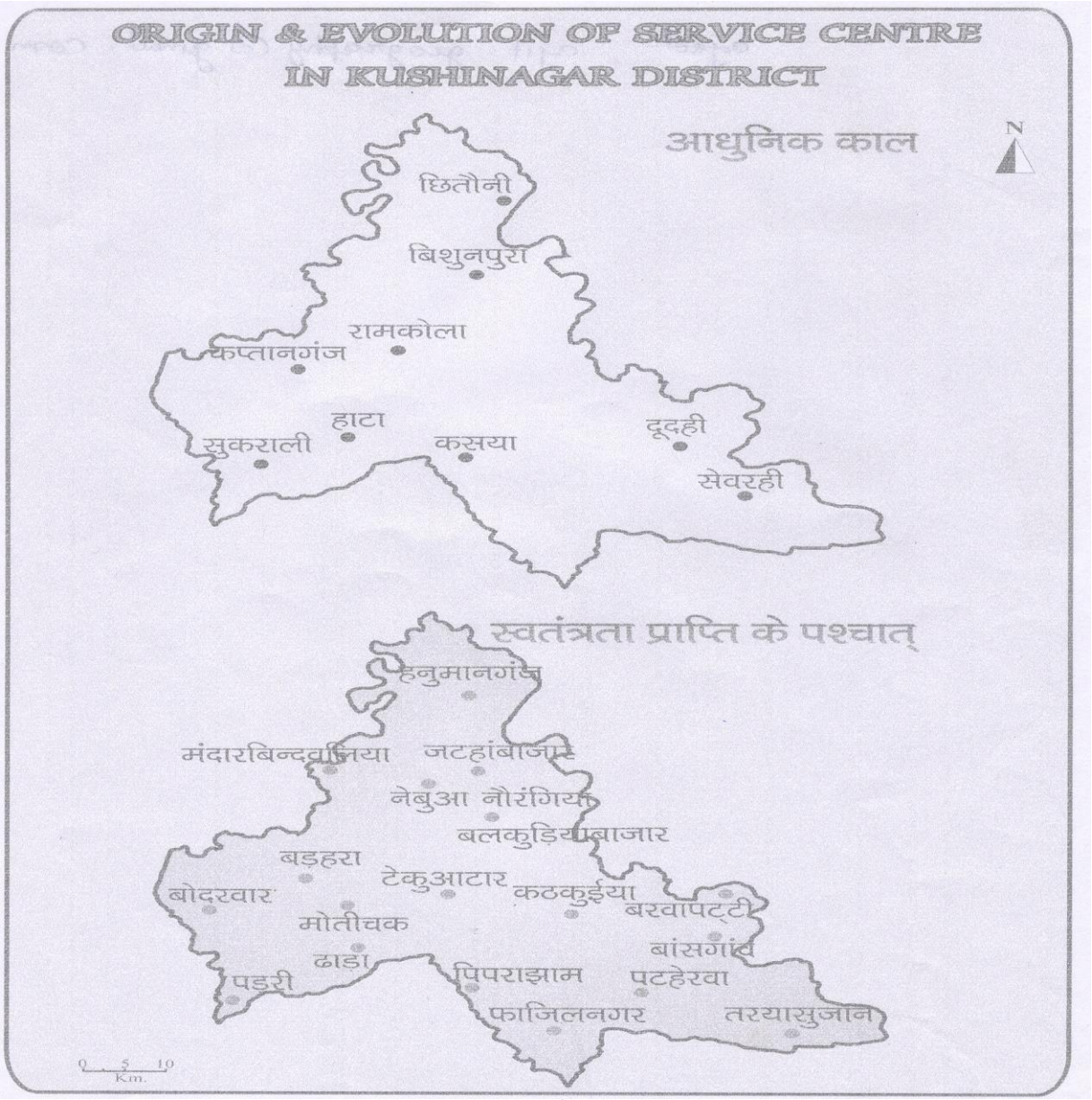

चित्र–3

अध्ययन क्षेत्र में इन विकासखण्डों की स्थापना स्वतंत्राता पश्चात् की गयी जिसका प्रभाव सेवा–केन्द्रों के विकास पर पड़ा, क्योंकि स्वतंत्राता मिलने के पश्चात् महात्मा गांधी के विचारों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्राों में ऐसे सेवा–केन्द्रों की स्थापना करनी थी, जो उस क्षेत्रा की सेवा करने में तत्पर हो।[10] इसलिए अधिकांश विकासखण्ड मुख्यालय नगरीय क्रियाकलापों से कुछ दूर स्थापित किये गये। इस प्रकार इन प्रशासनिक इकाईयों की स्थापना से उस स्थान के विकास में सहायता मिली। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् तीव्रगति से पक्की सड़कों को निर्माण किया गया। इससे ऐसे केन्द्र जो समुचित परिवहन अभाव के कारण सुस्त पड़े थे, वे इन सड़कों के विकास से जागृत होकर विकसित हुए। इससे नये केन्द्रों की भी उत्पत्ति हुई। चूंकि यहाँ का धरातलीय स्वरूप समतल है अतः सड़क मार्ग के निर्माण के लिए उपयुक्त हैं। अध्ययन क्षेत्रा का उत्तरी–पूर्वी भाग बाढ़ से प्रभावित रहता है अतः इन क्षेत्रों में पक्की सड़कों का विकास अपेक्षाकृत कम हुआ है। स्वतंत्राता के पश्चात् छोटी नदियों पर पुल निर्माण से व्यापार को बढ़ावा मिला तथा बसों, ट्रकों, टैक्सियों के गमनागमन से इन सड़कों पर नये सेवा–केन्द्रों के उद्भव के साथ ही पूर्व स्थित सेवा–केन्द्रों का भी विकास हुआ। रेल एवं सड़क मार्ग के विकास के साथ–साथ व्यापार एवं वाणिज्यिक केन्द्रों का विकास द्रुत गति से हुआ। कुशीनगर जनपद की समतल एवं उर्वर भूमि में गन्ना की प्रमुखता है। स्वतंत्राता पूर्व सड़कों एवं रेल लाइनों के विकास के साथ यहां गन्ना पर आधारित चीनी मिलों का सकेन्द्रण आरम्भ हुआ और स्वतंत्राता पश्चात् आधारभूत सेवाओं के विस्तार के साथ इनकी गहनता बढ़ती गयी। फलस्वरूप चीनी मिलों की संख्या की दृष्टि से यह जनपद सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में प्रथम स्थान पर आ गया। इन चीनी मिलों के स्थापना के स्थल सेवा–केन्द्र के रूप में विकसति हो गये। वर्तमान समय में इस

जनपद के अन्तर्गत पडरौना, रामकोला, सेवरही, लक्ष्मीगंज, कप्तानगंज, कठकुईयाँ, छितौनी, खड्डा और ढ़ाडा सेवा–केन्द्र का विकास चीनी मिलों की स्थापना के कारण ही हुआ। यहाँ यह उल्लेख करना समचीन होगा कि रामकोला, खड्डा और कप्तानगंज का विकस चीनी मिलों की स्थापना के पूर्व हो चुका था, जबकि पडरौना का विकास मुख्यरूप से प्रशासनिक एवं व्यापारिक कारणों से हुआ बाद में चीनी मिल की स्थापना ने इसे बढ़ावा दिया। अपने चतुर्दिक उपभोक्ताओं की आवश्यकता पूर्ति हेतु सेवा–केन्द्रों में व्यापारिक प्रतिष्ठानों की स्थापना, सेवा–केन्द्रों के विकास का प्रमुख कारण रहा है, क्योंकि अपने क्षेत्र की सेवावृत्ति के अभाव में कोई भी केन्द्र सेवा–केन्द्र की परिसीमा में नहीं आ सकता31 अतः वस्तु विनिमय एवं व्यापार ने सेवा–केन्द्रों के उद्भव एवं विकास में सबसे प्रभावशाली एवं शक्तिशाली कारक के रूप में कार्य किया। उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कुशीनगर जनपद प्राचीनकाल से ही मानव बसाव का केन्द्र रहा है। कौशल राज्य के प्रभाव में होने के कारण यहाँ पर प्राचीन नगरों का उद्भव एवं विकास हुआ। क्षेत्रा में बहने वाली बड़ी गण्डक (नारायणी नदी) एवं छोटी गण्डक, बाँसी आदि नदियाँ जल के साथ–साथ व्यापार के लिए परिवहन मार्ग भी प्रदान करती थी। अतः इनके किनारे ही अधिवासों एवं कस्बों का विकास हुआ। जिसमें से अधिकांश ने सेवा–केन्द्र के रूप में विकसित हो गये। बौद्ध एवं जैन धर्म से सम्बन्धित अनेक स्थल, मठ, मूर्तियाँ एवं स्तूपों का भग्नावशेष के रूप में आज भी जनपद में दृष्टिगत होते हैं। अंग्रजों के अधीन आने पर यहाँ म्युनिसिपल बोर्ड की स्थापना हुई जिससे सामाजिक ढांचे में तेजी से परिवर्तन होने लगा। स्वतंत्राता प्राप्ति के बाद ढांचागत विकास के कारण सेवा–केन्द्रों का तीव्र गति से विकास हुआ तथा कुछ नवीन सेवा–केन्द्र भी अस्तित्व में आये।

निष्कर्ष–

किसी भी प्रदेश या क्षेत्र में सेवाकेन्द्रों के उद्भव एवं विकास में उस स्थान विशेष की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान होता है। उस स्थान या क्षेत्र विशेष की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक कारक सेवाकेन्द्रों के उद्भव एवं विकास को प्रभावित करते है तथा इसे सहायता प्रदान करते है। सेवाकेन्द्र वस्तुतः एक मानवीय रचना होते हैं। लेकिन इसके प्रारम्भिक आधार को भौतिक कारक ही सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। वस्तुओं का विनिमय एक प्राथमिक आवश्यकता है जिसकी पूर्ति के लिए सेवाकेन्द्रों का जन्म होता है तथा जैसे–जैसे आर्थिक आवश्यकताओं में परिवर्तन होने लगता है उसी के अनुरूप सेवाकेन्द्रों में परिवर्तन होने लगता है। किसी भी सेवाकेन्द्रों के उद्भव एवं विकास में उस केन्द्र द्वारा सम्पादित कार्य होते है। प्राचीनकाल के कई सेवाकेन्द्र इसलिए समाप्त हो गये कि या तो उनका कार्य समाप्त हो गये या तो उनका कार्य कम हो गया या कार्य सम्पादित करने की क्षमता कम होती गयी। सेवाकेन्द्रों के लगातार विकास के लिए अपने समीपवर्ती क्षेत्रों को लगातार सेवा देना अनिवार्य होता है।

REFERENCE

1. Yeates and Garner; 'The North American City; P-160.
2. Christaller; W. (1933); 'Central Place in Southern Germany; Tran. By C.W. Baskin-New Jersy.
3. Singh O.P. (1973) 'Central Plases and their origin and Evalution; U.B.B.P. Vol.-9, P-30-34.
4. National Atlas and Thematic Mapping Organisation Department of Science and Techonology.
5. सामाजार्थिक समीक्षा, जनपद कुशीनगरः 2008, पृ. 04.
6. सामाजार्थिक समीक्षा, जनपद कुशीनगरः 2008, पृ. 06
7. तिवारी रामचन्द्र, 'अधिवास भूगोल' (1977), पृ0 17
8. Singh, O.P. (1973) Central Places and their origin and Evalution; V.B.B.P. Vol. 9, P-30-34
9. Dutta, N. and Bajpai K.D. 'Development of Budhism in Uttar Pradesh', P-345.
10. Mishra, R.P. Sundaram K.P. and Prakesh Rao (1974), 'Regional Development planning in India, A New Strategh, Vikash Publishing House,P-180-218